Vol. 4, No. 1 (January 2015) p. 50-57 Sangeet Galaxy
ISSN: 2319-9695

ख़्याल गायकी – भेंडी बाज़ार घराने के संदर्भ में

भूमिका द्विवेदी
शोधार्थी – संगीत विभाग,
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय,
उदयपुर, राजस्थान
Email: bhoomika264@gmail.com

शोध पत्र सारांश

समय के साथ परिवर्तन को सहृदयता से अपनाना अवश्य ही निरन्तरता, गतिशीलता और सृजनात्मकता का सूचक है, परन्तु साथ ही स्वयं की मौलिकता का संरक्षण भी स्वास्तित्व के नव सर्जन का आग्रह ही तो है। प्रस्तुत विचार भारतीय संस्कृति की अक्षुण धरोहर भारतीय शास्त्रीय संगीत पर प्रकाश डालते हैं। यहाँ भारतीय शास्त्रीय संगीत की उसके प्रादुर्भाव के प्राचीनतम काल से अब तक की बदलती देश, काल, परिस्थितियों में हुए विकास व बदलते स्वरूप की संक्षिप्त चर्चा की गई है। मूल रूप से शोध पत्र भारतीय शास्त्रीय संगीत में ख़्याल गायकी के विभिन्न घरानों में विस्मृत कर दिए गए 'भेंडी बाज़ार घराना' की दुर्लभ गायन शैली की विशेषताओं को वर्णित करता है। भेंडी बाज़ार घराना गायन शैली वैविध्यपूर्ण, अखण्डत्व व कलात्मक वैशिष्ट्य के विलक्षण तत्वों से सजी संवरी अपार समृद्ध व अनूठी गायकी है, तथापि नवीनीकरण व संचार माध्यमों के इस दौर में भी यह घराना कुछ कारणों से दुर्लभ व विस्मृत गायकी की श्रेणी में आ गया जो कि घराने के शुभचिंतक कलाकारों के अथक प्रयासों से पुनर्जीवित व सक्रिय हो सका है। वर्तमान में डेढ़ शताब्दी पूर्व स्थापित इस घराने की परम्परा में देश के विभिन्न स्थानों में सक्रिय शिष्यों/कलाकारों से मिलकर बनता है 'भेंडी बाज़ार परिवार'।

(सूचक शब्द : घराना गायन शैली, घराना संरक्षण, ख़्याल गायकी, भेंडी बाज़ार घराना, भेंडी बाज़ार घराने की विशेषताएँ)

'भारतीय शास्त्रीय संगीत' निःस्सदेह ही इस विषय एवं इसके अन्तर्गत तथ्यों पर दृष्टिपात से पूर्व भारतीयता के मर्म को समझ लेना चाहिये। बीसवीं सदी के महान चिंतक रोम्या रोलाँ ने लिखा है ''अगर इस धरती पर कोई ऐसी जगह है, जहाँ सभ्यता के आरम्भिक दिनों से ही मनुष्यों के सभी स्वप्न आश्रय और पनाह पाते रहे हैं तो वह जगह 'हिन्दुस्तान' है।''[1] महान् अरबी लेखक अल मसूदी द्वारा दसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में रचित ग्रंथ ''मुरूजुल जहब' में भारत सम्बन्धी अध्याय का आरम्भ कुछ इस प्रकार है, ''यह जनमान्य धारणा है कि भारत पृथ्वी का वह भाग है जहाँ अति प्राचीन काल में शान्ति और ज्ञान की प्रधानता थी।''[2] प्रसिद्ध विचारक सी.इ.एम. गौड़ ने लिखा है, ''मानव–जाति को भारतवासियों ने जो सबसे बड़ी चीज वरदान के रूप में दी है, वह यह है कि भारतवासी हमेशा ही अनेक जातियों के लोगों और अनेक प्रकार के विचारों के बीच समन्वय करने को तैयार रहे हैं और सभी प्रकार की विविधताओं के बीच एकता कायम करने की उनकी लियाक़त और ताक़त लाजवाब रही है।''[3]

ये सभी कथन भारतीय संस्कृति का परिचय देते हैं। संस्कृति समाज का आईना़ होती है और कलायें संस्कृति का दर्पण। भारतीय संस्कृति चाहे वैदिककालीन हो, चाहे मध्यकालीन अथवा उत्तरकालीन, कुछ अपरिवर्तनीय आदर्श ग्रहण किये हुये है। विभिन्न जातियों के सम्पर्क सामाजिक तथा राजनैतिक उथल–पुथल के बावजूद इसकी अपनी विशेषताएँ हैं। ये विशेषताएँ ही भारतीय संस्कृति के आदर्श हैं।

संगीत में भारतीय संस्कृति के आदर्शों, धारणाओं, मान्यताओं को महत्वपूर्ण व उचित स्थान दिया गया है। संगीत का धर्म से घनिष्ठ संबंध रहा है। प्राचीन समय में संगीत तथा ईश्वर भक्ति एक सिक्के के दो पहलू थे। वेदों से जन्मा संगीत देवालयों में ही पला बढ़ा। पूजा अर्चना, चाहे वह मन्त्र–पाठ हो अथवा आरती भजन, सांगीतिक रूप से ही होता था। नृत्य भी मंन्दिर में प्रयुक्त था। देवदासियों द्वारा ईश्वर के सम्मुख नृत्य किया जाता था। ईश्वर स्तुति हेतु अनेक ध्रुपद रचे गये।[4] मध्यकाल तक मंदिरों में रहने वाला भारतीय शास्त्रीय संगीत अब राजदरबारों में आ चुका था। अब भक्तिपूर्ण साहित्य अलंकृत ध्रुवपदों का स्थान, ख़्याल गायकी ले चुकी थी। जिनमें अधिकांश बंदिशें शासकों की प्रशंसा अथवा साजश्रृंगार के रस से युक्त हुआ करती थी। ख़्याल ने अपनी सभी समकालीन प्राचीन या नवीन संगीत–शैलियों के गुणों का स्वयं में समावेश करने के लिये अपने द्वार सदैव खुले रखे हैं। ऋचागान, गीति गायन और ध्रुपद की बानियों से लेकर ख़्याल गायकी तक का सफर उत्तर भारत में ख़्याल एवं दक्षिण में पल्लवी ने कई परिवर्तनों के साथ लगभग समानान्तर ही तय किया। सभी कलाओं में शास्त्रीय और लौकिक दोनों रूप होते हैं। हिन्दुस्तानी संगीत में ध्रुवपद विशुद्धतः शास्त्रीय है, ठुमरी अथवा लोकगीत विशुद्धतः लौकिक या रूमानी। ख़्याल शास्त्रीय और रूमानी दोनों का सम्मिश्रण है। समय से कदम मिला कर चलने और इतनी उदार शैली होने के बावजूद भी आज ख्याल गायकी संरक्षण प्राप्त कलाओं के दायरे में आती है। कुछ तो अपने साहित्य की, उत्कृष्ठता व विचार में गिरावट से और कुछ अंग्रेजो के भारतीय संस्कृति पर कुठाराघात से यह गायकी स्वतंत्र भारत के संभ्रांत परिवारों व जनसाधारण से पर्याप्त दूरी बना चुकी थी। यह तो भला हो विष्णुद्वय और उनके समकालीन सभी नामचीन व गुणी कलाकारों का जिन्होनें इस गायकी को सहेजने में पंडित भातखण्डे व पंडित पलुस्कर का सहयोग किया और यह शैली आखिरकार इतनी तो बचा ही ली गयी कि ख़्याल गायन शैली और उससे संबंधित घरानों का परिचय दिया जा सके।

सवाल यह है कि भारतीय शास्त्रीय संगीत की लुप्तप्रायः होती इस ख़्याल गायकी और घरानों के विलीनीकरण के इस दौर में घराना गायकी को लेकर यह राग आलापना कहाँ तक तर्क संगत है ? तो इसका जवाब भी इसी प्रश्न में है कि इसे तर्क संगत बनाना होगा और इसे आप और हम ही तर्क संगत बनाऐंगे। निःसंदेह परिवर्तन सृजनशीलता का द्योतक है, परिवर्तन प्रकृति का नियम है और परिवर्तन अवश्यम्भावी है परन्तु कुछ चीज़ों का मज़ा उन्हें यों ही सहेज के रखने में है जैसे हमारी संस्कृति हमारी विरासत । परिवर्तन को व्यापक दृष्टि और सहृदयता से स्वीकारने के साथ ही इस धरोहर को कैसे अक्षुण्ण बनाये रखा जाये इस सुचिंतन और संतुलन की आवश्यकता है।

इस संरक्षण की आवश्यकता पूर्व में ही अनुभव कर संगीत–नृत्यकारों ने अपनी रचना को शिष्य–परंपराओं के बीच बनाये रखना चाहा। इस हेतु कला–गुरूओं ने दीक्षा द्वारा, साधना द्वारा अपनी सृजन और भावधारा शिष्यों में प्रतिभात की। इससे शिष्यों की एक विशेष रीति बनी जिसकी विशेषतायें वंश एवं गुरू–शिष्य परम्परा द्वारा हस्तांतरित होने लगी। इस रीति को 'घराना' का नाम दिया गया।[5] सामान्यतया घराना शब्द एक कौटुम्बिक परम्परा या वंश परम्परा को प्रदर्शित करता है। परन्तु संगीत में घराना शब्द से तात्पर्य ख़्याल गायन की विभिन्न शैलियों से है। ख़्याल गायन की वैशिष्ट्यपूर्ण शैली का परम्परा से पालन करना ही संगीत में घराने का अर्थ स्पष्ट करना है। ऐसी परम्परागत वैशिष्ट्य पूर्ण गायन प्रणाली गुरू–शिष्य परम्परा द्वारा ही सम्भव है। अतः संगीत में घराना पद्धति एक सशक्त, सुदृढ़ गुरू शिष्य परम्परा की और संकेत करती है। हालाँकि कोई एक शैली अपनी विशिष्टताओं को ज्यों का त्यों सदियों सहेज के रख सके इसकी मूलभूत आवश्यकता ही इसमें है कि घराने के संस्थापक कलाकार की कला में

वैयक्तिकता या स्वयं की अपूर्व प्रतिभा हो परन्तु घराना सुरक्षित चलने के लिये शिष्यों की वैयक्तिकता बाधक हो सकती है।

घरानों की उत्पत्ति हेतु विद्यादान करने वाले गुरू एवं प्रतिभाशाली, निष्ठावान व समर्पित शिष्यों का होना अत्यावश्यक है। घराने की शैली विशेष में विलक्षण तत्व, अखंडत्व, बेजोड़पन, कलात्मक वैशिष्ट्य इत्यादि विशेषताओं के दृष्टिगोचर होने पर ही एक घराने का आविर्भाव होता है, परन्तु इतना ही काफी नहीं, घराने के शिष्य–समुदाय द्वारा इस शैली विशेष का अनुकरण किये जाने पर ही घराने अपने स्वरूप में प्रतिष्ठित होते हैं। इस प्रक्रिया से गुजरते हुये जब वही वैशिष्ट्य संगीत–समाज द्वारा स्वीकार्य हो जाता है तब उसे 'घराना' के रूप में प्रतिष्ठा मिल जाती है।[6]

मध्यकाल में लगभग सभी राजदरबारों में नियुक्त कलाकारों ने उस स्थान अथवा अपनी परम्परा के प्रमुख प्रर्वतक के नाम पर 'घरानों का नामकरण किया जो इसी तरीके से आज तक भी चला आ रहा है। इस तरह से एक घराने के गायन, वादन अथवा नृत्य की अपनी कुछ विशेषतायें होती है जो उन्हें दूसरे घरानों से पृथक कर पहचान पाने में सहायक होती है।

यहाँ ध्यान देने योग्य है कि संभव है यही संकीर्णता, शैली को सीमित कर देने वाले बंधन और कठोर नियम ही इन घरानों के लुप्त प्रायः होने के कारण रहे हों। या तो इन घरानों की शिष्य परम्परा अपने घराने की विशिष्टताओं को सहेज के रखने के उस मर्म को समझ ना सकीं या कहीं ये शिष्य परम्परायें बिल्कुल लकीर के फकीर की तरह बेहद रूढ़ीवादी, कठोर और स्वयं के घराने को सर्वश्रेष्ठ साबित करने के जंजालों में फंसी रही। परवर्तीकाल में कुछ घरानों के साथ यह भी देखा गया कि शिष्य परम्परा घराने की विशेषताओं को सही मायने में प्रस्तुत, प्रचारित–प्रसारित नहीं कर सकी और घराने लुप्त होने के कगार पर आ गए अथवा लुप्त हो ही गये हैं।

यहाँ घरानों की कुछ विशेष महत्वपूर्ण बातों की और ध्यान आकृष्ट करते हुये, परम्परा के साथ परिवर्तन के प्रति व्यापक दृष्टिकोण रख उसे स्वीकारने और दोनों में सामंजस्य व सन्तुलन रखते हुये नए सृजन की दृष्टि से श्री वामनहरि देशपांडे का कथन उल्लेखनीय है – ''प्रत्येक घराना किसी एक प्रभावशाली गुरू की आवाज़ की प्रकृति पर आधारित होता हैं। उस घराने से संबंधित शिष्यों को घरानें की रीतियों, अनुशासन तथा नियमों का पूर्णतया पालन करना होता है। अनेक पीढ़ियों तक यह सिलसिला चलने पर ही 'घराना' घराने की प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकता है। प्रत्येक व्यक्ति की आवाज़, उसकी बनावट भिन्न–भिन्न होती है। इसी कारण कुछ विशिष्ट प्रकार के अलंकरण विशिष्ट प्रकार की आवाज़ में अधिक सुन्दर, अधिक मधुर और प्रभावशाली प्रतीत होते हैं। अतः बुद्धिमान गायक कलाकार अपनी आवाज के गुण–धर्म के अनुसार ही अपनी गायकी को सौंदर्य पूर्ण बनाते हैं। इस प्रकार की गायकी जब गुरू से शिष्य को प्राप्त होती है तो शिष्य, परम्परा से प्राप्त गुणों को अपने स्वभाव व प्रकृति के साथ सम्मिलित करते हुये शिष्य–परम्परा को आगे बढ़ाता है। इससे वह परम्परागत गायन प्रणाली अपने सौंदर्य तत्वों के साथ–साथ शिष्य परम्परा के गुणों को मिलाकर एक नवीन रूप धारण कर लेती है और चिरकाल तक जीवित रहती है। प्रयोगात्मकता के सुंदर सम्मिश्रण से ही घराने जड़ पकड़ते और बढ़ते हैं।''[7]

यहाँ यह ध्यान रखने योग्य बात है कि वास्तव में नए तत्वों का समावेश अच्छे–बुरे परिणामों को सोच विचार के किया जाये। बंधनों में जकड़ कर यदि कला को कला कहा जाये तो अवश्य ही उसे

उपयुक्त संबोधन से संबोधित नहीं किया जा रहा है। तिस पर संगीत कला जिसकी सीमायें नदी के दो किनारों की तरह है, जिनकी सीमा में रहकर वो कभी चंचल चपल तो कभी शान्त भावों से गतिमान रहे, सीमा से परे वो आक्रामक, उच्छृंखल और वीभत्स बाढ़ का रूप ले लेगी जिसमें संस्कृति और सभ्यताएँ बह जायेंगी। ऐसे परिवर्तन जो निरंकुशतापूर्ण नहीं हैं, वास्तविक प्रगति के शुभ लक्षण हैं और सौंदर्य वृद्धि के साथ मूल आधार को नुकसान नहीं पहुँचाते हैं तो कला की प्रत्येक शैली को उनका स्वागत करना चाहिये। परन्तु ये परिवर्तन इतना न हो कि इसके मूल आधार का स्वरूप ही विनष्ट हो जाए। उपरोक्त श्री वामनहरि देशपाण्डे के कथनानुसार ऐसी संतुलित साधना के धनी कलाकारों में उ. अमीर खाँ, पं. भीमसेन जोशी, कुमार गंधर्व, और किशोरी अमोणकर के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। उ. अमीर खाँ, जिनकी गायकी में किराना घराने के अब्दुल वहीद खाँ और भेंडी बाज़ार घराने के उ. अमान अली खाँ के साथ–साथ अपनी गायकी की कुछ और विशेषताएँ भी हैं।[8] पं. भीमसेन जोशी जिनकी गायकी अब्दुल करीम खाँ की गायकी से कुछ अलग जगह बनाती है और उनमें अपनी कई सारी विशेषतायें हैं तब भी वे किराना घराने के संसार प्रसिद्ध कलाकार हैं। ठीक इसी तरह ग्वालियर घराना गायकी के अंदाज़ से भिन्न एक व्यक्तिगत भावपूर्ण गायकी प्रस्तुत करने वाले कुमार गंधर्व ग्वालियर घराने के मुख्य प्रतिनिधि कलाकार हुये जबकि उन्होने भेंडी बाज़ार की प्रख्यात गायिका गानतपस्विनी विदूषी अंजनीबाई मालपेकर से भी शिक्षा प्राप्त की थी।[9] अपनी परम्परागत गायकी को लेकर कुछ कम ही कठोर तथा सभी सौंदर्य तत्वों और भावों का अपनी गायकी में लचीलेपन से समावेश करने वाली किशोरी अमोणकर ने भी अंजनीबाई जी से संगीत शिक्षा प्राप्त की।[10] अपने घराने को सर्वाधिक प्रसिद्धि दिलाने वाली जयपुर–अतरौली घराने की प्रतिनिधि कलाकार किशोरी अमोणकर ही हुई। इन उदाहरणों से तात्पर्य यह है कि ये सभी कलाकार अपनी परम्परा को ससम्मान प्रचारित करते हुये भी एक नयी सृजनात्मकता के साथ परम्परागत गायकी को पेश कर रहे थे जो कि संरक्षण के साथ ही सृजन के अतीव सुन्दर समन्वय के रूप में स्थापित हुई। कला के किसी भी क्षेत्र में यही सुंदर समन्वय दूरगामी प्रभाव छोड़ पाता है। नित नई सर्जना की यही प्रक्रिया कलाकार की वैयक्तिक गायकी के अतिरिक्त घरानों के निर्माण का भी आधार है।

ऐसे ही घरानों में है ख़्याल गायकी का ''भेंडी बाज़ार घराना'' (Bhendi Bazar)। भेंडी बाज़ार घराने का इतिहास 150 वर्ष पुराना है। 18वीं शताब्दी में मुरादाबाद से मुम्बई के भेंडी बाज़ार इलाके में आकर बसे तीन भाई उ. छज्जू खाँ, नज़ीर खाँ व खादिम हुसैन खाँ इस घराने के संस्थापक थे। सन् 1870 के करीब भेंडी बाज़ार मुम्बई का उच्च भ्रू इलाका था, बड़े–बड़े व्यापारियों और धनवान लोगों का यहाँ निवास था। 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में विकसित होने वाले इस घराने की खास विशेषताओं की वजह से शीघ्र ही संगीत क्षेत्र में यह प्रशंसा एवं आदर का धनी हो गया।[11]

(भेंडी बाज़ार, मुम्बई)

एक से एक महान् संगीतकारों से अलंकृत इस घराने की समृद्ध शिष्य परम्परा के संक्षिप्त इतिहास में उ. मम्मन खाँ, दिल्ली घराने के उ. चाँद खाँ, उ. शाहमीर खाँ, (उ. अमीर खाँ के पिताजी) वाडिलाल शिवराम, उ. झण्ड़े खाँ, उ. कादर बख्श, श्रीमती नैनादेवी, बेगम अख्तर, किशोरी अमोणकर, कुमार गंधर्व, लता मंगेशकर, आशाभोंसले, अमीर खाँ, शिवकुमार शुक्ल, मास्टर नवरंग, रमेश नाडकर्णी, दयानन्द देवगंधर्व, पं. जगन्नाथ प्रसाद, पांडुरंग आंबेरकर, वसन्तराव देशपाण्डे, मुहम्मद हुसैन खाँ, त्र्यंबकराव जानोरीकर इत्यादि अग्रणी नाम हैं।[12] इस समृद्ध शिष्य परम्परा को तैयार करने का श्रेय उ. नजीर खाँ, उ. छज्जू खाँ व उ. खादिम हुसैन खाँ के साथ–साथ उनकी पट्ट शिष्या गान तपस्विनी पं. अंजनी बाई मालपेकर तथा उ. छज्जू खाँ के पुत्र उ. अमान अली खाँ को विशेष रूप से जाता है।

पं. अंजनी बाई मालपेकर (1833-1974)

उ. अमान अली खाँ (1888-1953)

घराने के संस्थापक तीनों भाई उ. नजीर खाँ, उ. छज्जू खाँ व उ. खादिम हुसैन खाँ ने अपनी संगीत शिक्षा अपने पिता उ. दिलावर हुसैन खाँ से प्राप्त की। अपनी कला में वृद्धि करने के उद्देश्य से इन्होने रामपुर–सहसवान घराने के उ. इनायत हुसैन से भी शिक्षा प्राप्त की। इसके पश्चात् ये जयपुर गये और डागर घराने के उ. इनायत खाँ से ध्रुपद की शिक्षा ग्रहण की। इस प्रकार इस घराने की गायकी का विशेष आकर्षण इन तीनों भाईयों के गायन की अपनी–अपनी कुछ अलग विशेषताओं का सुन्दर समन्वय ही है। [13]

बडे भाई उ. छज्जू खाँ ध्रुपद शैली के समर्थ गायक थे। ख्याल में सौंदर्य युक्त बोल–आलाप एवं सरगम उनकी विशेषता थी। उन्होने ध्रुपद एवं ख्याल की अनेक उत्कृष्ट बंदिशों की रचना की। इन बंदिशों के लिये उन्होने अपना उपनाम 'अमर' रखा था। वे बहुत ही आध्यात्मिक प्रवृति के थे इसलिये अन्य कलाकार उन्हे 'अमरशाह' नाम से भी सम्बोधित करते थे। दूसरे बन्धु उ. नज़ीर खाँ खण्डमेर स्वर साधना और बीन अंग की गायकी के प्रखर विद्वान थे। मींडयुक्त आलाप के लिये वे प्रसिद्ध थे। उनकी आवाज में एक अलग ही ताकत और गम्भीर गहराई युक्त गुंजन था। सबसे छोटे भाई उ. खादिम हुसैन खाँ की विशेषता थी उनकी ज़ोरदार गमक और बलपेंच की 'मट्टीतानें'। उनकी तानें खण्डमेर के तत्व पर आधारित तथा बलपेंच, गमक और हुँकार युक्त हुआ करती थीं। [14]

आवाज़ का गुंजनयुक्त लगाव, दीर्घ दमसांस बीन के ढंग के मींड युक्त आलाप उन आलापों में खंडमेर तत्व से राग की विस्तार पूर्ण बढ़त, सरगम का ख़ास ढंग, गमक और बलपेंच की हुंकार युक्त तानें, व इसके अतिरिक्त शब्द–स्वर–लय के अनोखे संगम से युक्त बंदिशें इत्यादि भेंडी बाज़ार घराने की ख़ास विशेषताएँ हैं। भेंडी बाज़ार घराने में आवाज़ को उसके स्वाभाविक ढ़ंग से लगाने पर ध्यान दिया जाता है परन्तु आवाज़ में वज़न, स्वरों में गहराई तथा गुंजन हेतु विशेष सतर्कता बरती जाती है। इसके लिये किसी एक विशिष्ट प्रकार अथवा बनावटी गूंज से आवाज़ लगाने का आग्रह नहीं किया जाता बल्कि ओंकार एवं खर्ज–साधना पर बल दिया जाता है जिससे आवाज़ में ये विशेषताएँ स्वाभाविक रूप से स्थान बना पाती हैं। मूलतः यह गायकी बीन अंग की होने की वजह से सुरों में गुंजन तथा निरंतरता अर्थात एक सुर को दूसरे

से जोड़ते हुये स्वर विस्तार करने पर ध्यान दिया जाता हैं। ख़्याल के साथ की आलापचारी केवल 'आ' कार से न होकर शब्दों में आने वाले आ,इ,उ, ओ जैसे उच्चारानुसार आवाज़ की घनता सूक्ष्म रूप से बदल कर किये जाने पर भी ध्यान दिया जाता है इससे आलापों की नादमयता बढ़ती है। इन विशेषताओं के समुचित प्रयोग से प्रस्तुतीकरण में एक आकर्षक घनता व निरंतरता आती है।

भेंडी बाज़ार गायकी को विस्तृत आधार देने वाली दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता है मेरूखण्ड, या खण्डमेर। यह मूलतः गणितीय संकल्पना पर आधारित सांगीतिक तत्व है। तीन, चार या पाँच स्वरों के समूह को बदल–बदल कर स्थान परिवर्तन के साथ प्रयोग करना खण्डमेर की मूल प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया से दो स्वरों के 2 प्रकार बनेंगे, तीन स्वरो के छः तो चार स्वरों से चौबीस जैसे–

सा
सारे रेसा

सारेग, सागरे, रेसाग, रेगसा, गसारे, गरेसा। सारगम, सारेमग, सागरेम, सागमरे, सामरेग, सामगरे; रेसागम, रेसामग, रेगसाम, रेगमसा, रेमसाग, रेमगसा, गसारेम, गसामरे, गरेसाम, गरेमसा, गमसारे, गमरेसा; मसारेग, मसागरे, मरेसाग, मरेगसा, मगसारे, मगरेसा।

इस तरह से 7 स्वरों से यह क्रिया सम्पन्न की जाये तो 5040 स्वर समूह बनेंगे। इस प्रकार स्वरों के समूहों अर्थात् खण्ड़ों से बना शिखर अर्थात् मेरू; खण्डमेर या मेरूखण्ड कहलाता है। राग की बढ़त प्रक्रिया का यदि सूक्ष्म अवलोकन करें तो हम पायेगें कि किसी भी घराने में कोई भी गायक अथवा वादक कम या अधिक मात्रा में इसी क्रिया का प्रयोग करता है लेकिन अन्य घरानों की तुलना में भेंडीबाज़ार घराने में यह तत्व स्पष्ट रूप से उजागर होता है। खण्डमेर प्रक्रिया राग प्रस्तुतिकरण के दायरे को विस्तृत बनाती है। आलाप, सरगम, तान इत्यादि को सौंदर्यपूर्ण रूप से, लयदार गायकी व मेरूखण्ड का इस्तेमाल करते हुये राग प्रस्तुतिकरण को आकर्षक, विशाल व गरिमापूर्ण बनाना भेंडी बाज़ार घराने की महत्वपूर्ण विशेषता है। इसके अतिरिक्त भेंडी बाज़ार गायकी की एक अन्य विशेषता है आन्तरिक लय । यहाँ सम्पूर्ण गायकी में लय का एक अटूट प्रवाह महसूस होता हैं। इस गायकी के संयत आलाप भी लय से नाजुक रिश्ता क़ायम रखते हुये चलते हैं। विलम्बित ठेके में तो आन्तरिक लय स्थापित होती ही है परन्तु मध्य अथवा द्रुत लय में भी यहाँ लयकारी के स्थान पर लय विलास होता है। ठेके से मुठभेड न कर उसके साथ आनंद दायक डोलना इस गायकी का विशेष आकर्षण है। इसी लय के साथ यहाँ सरगम का गुँथा हुआ सुंदर प्रयोग होता है। भेंडी बाज़ार गायकी में 'सरगम' को ख़्याल गायकी का स्वतंत्र अंग माना गया है और उसका विशेष ढंग से प्रयोग किया जाता है। यहाँ सरगम लयदार है। बंदिश के ठेके की लय मात्राएँ और खण्डों से लिपटकर सरगम चलती है। इनके स्वर समूहों में प्रत्येक स्वर का विशिष्ट स्थान है। लय का वज़न है। भेंडी बाज़ार की सरगम अन्य सरगमों से भिन्न लगने की एक और भी वजह यह है कि इन सरगमों के प्रस्तुतिकरण को थोड़ा सा कर्नाटिक संगीत के सरगम का रंग चढ़ाया जाता है। [15]

इसी प्रकार तानों में खण्डमेर पर आधारित स्वराकृतियों में विशेष बल एवं गमक के साथ ली गयी तानें भेंडी बाज़ार गायकी की अन्य विशेषता है। इन तानों की लय थोड़ी धीमी होती है। गमक एवं अलग–अलग जगह बल देकर वैचित्र्य लाया जाता है। इन तानों से गायकी को गम्भीरता व वज़न प्राप्त होता है।

भेंडी बाज़ार घराने की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विशेषता है राग का उसकी प्रकृति के अनुसार प्रस्तुतिकरण। भेंडी बाज़ार घराने में हर एक राग की प्रकृति की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। मींडयुक्त विलम्बित गायकी तथा स्वरकण युक्त मध्य लय की गायकी इन दोनों का संगम इस घराने में हुआ है। इसलिये जिस राग को जिस प्रकार की गायकी अधिक उपयुक्त होती है, उसी का अधिक प्रयोग उसे गाते समय किया जाता है। घराने की गायकी रागों पर थोपी नहीं जाती वरन् राग की प्रकृति के अनुसार गायकी के विविध अंगों का सुयोग्य रीति से उपयोग किया जाता है। यमन, भूप, मालकौंस जैसे राग मींडयुक्त विलम्बित शैली में तो हंसध्वनि, पटबिहाग, बरवा जैसे राग मध्य लय में स्वर–कणों से अधिक सजाये जाते हैं। वहीं नटभैरव, जोग जैसे राग दोनों विशेषताओं को एकत्र करके गाने से उनका सौंदर्य उभरकर आता है।

चूंकि भेंडी बाज़ार घराना गायकी का मूल भाव भक्ति व आध्यात्म रहा है इसलिये यहाँ की एक प्रमुख विशेषता है बंदिशों का साहित्य जो कि आध्यात्म के परम सौंदर्य का रसपान कराता है। यूँ तो भारतीय शास्त्रीय संगीत की नींव ही आध्यात्मिक है परन्तु गायन अथवा वादन को कलाकार की मनोवृत्ति, संस्कार, स्वभाव इत्यादि प्रभावित करते है। भेंडी बाज़ार घराने में उ. छज्जू खाँ, नजीर खाँ, व खादिम हुसैन खाँ ने जो संस्कार उ. अमान अली खाँ व अंजनी बाई मालपेकर को दिये वही आगे की पीढ़ी को भी हस्तांतरित होते आये। महान वाग्गेयकार उ. अमान अली खाँ की ऐसी ही एक बंदिश राग नागस्वरावली में, यहाँ उदाहरण हेतु प्रस्तुत है।

स्थाई जगत सुन्दर मान
जन बुधित गुन ग्यान
जानत सहुँ भेद, वाको सुगम जान।

अन्तरा नर नरन ज्योत मीन
बूझत गुनन कीरत,
निरमल बरन गुनन
'अमर' कर है बखान। [16]

उपरोक्त बंदिश अत्यन्त गूढ़ भाव प्रेषित करती है, जिसमें संसार के प्रति साधक का वैचारिक दृष्टिकोण विलक्षण है। कम ही घरानों का साहित्य इस विलक्षणता और विरोधाभास के साथ पाया गया है। संबंधित बंदिश आध्यात्मिक रूप लिये हुये भी संसार से किसी तरह का निराशा जनक भाव नहीं रखती अपितु संसार को ईश्वर का सुन्दर उपहार मान उसके प्रति आशावाद अपनाया है। बंदिश की प्रथम पंक्ति कहती है, जगत अत्यन्त सुन्दर और ईश्वर की माननीय/आदरणीय कृति है। दूसरी व तीसरी पंक्तियाँ क्रमशः 'जो बुद्धिमान व्यक्ति हैं अर्थात् जिन्हें आत्मबोध है उनका गुण 'ज्ञान' है, वे सभी भेद जान पाते हैं और यह संसार उन्हें सुगम जान पड़ता है' ऐसा विचार प्रेषित करती हैं। अन्तरे की पंक्तियाँ भी इसी के अनुकूल कहती हैं कि जिन नर नारियों की अंतर्ज्योति जगी है वे 'गुण' की कीर्ति को समझते हैं और गुणों से ही कीर्ति पाते हैं। उ. अमानअली खां 'अमर' इन्ही निर्मल गुणों का गुणगान करते हैं। वर्तमान में घराने की पाँचवी पीढ़ी द्वारा रचित बंदिशें भी इन्ही आध्यात्मिक संस्कारों के पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरण को सिद्ध करती हैं।

अवलोकन

भेंडी बाज़ार घराने के दिग्गज़ उस्तादों ने भारतीय शास्त्रीय संगीत को ही नहीं बल्कि जनमानस पर छाए हुए फिल्म संगीत को भी अत्यन्त प्रतिभावान व गौरवशाली कलाकार भेंट किये हैं। उस्ताद मम्मन खाँ, चाँद खाँ, शाहमीर खाँ, झण्डे खाँ, नैना देवी, बेगम अख़्तर से लेकर कुमार गन्दर्व व लता मंगेशकर तक भी यह पंक्ति समाप्त नहीं होती। अंश रूप में ही सही परन्तु उपरोक्त बड़े–बड़े नामों को अद्वितीय बनाने में भेंडी बाज़ार घराने की अतुल्य गायकी का योग अवश्य रूप से रहा है। भेंडी बाज़ार गायकी विविधताओं से परिपूर्ण होने के साथ ही अरूचिकर प्रतीत नहीं होती। एक सुन्दर संतुलन के साथ ही इन विविधताओं के अंतराल को पाटना भी इस शैली के गायकों की विशेष दक्षता जान पड़ती है।

दुर्भाग्यपूर्ण है कि ऐसी अनन्य विशेषताओं से अभिमंत्रित ख़्याल गायकी के इस घराने को काल का एक बहुत बड़ा अनुभाग जो स्वर्णिम हो सकता था, वो उपेक्षित ही व्यतीत करना पड़ा सम्भवतया इसका कारण समय के उस विशिष्ट खण्ड में वयोवृद्ध कलाकारों व अगली पीढ़ी के कलाकारों के बीच एक वृहद् अंतराल रहा होगा। आध्यात्म का प्रभाव तो कलाकारों द्वारा रचित बंदिशों व फ़क़ीरी बादशाहत से दृष्टव्य होता ही है, यह भी संभव है कि इस अंतराल का मूल कलाकारों की एकाकी व अंतर्मुखी प्रवृत्ति में रहा हो।

सम्प्रति, भेंडी बाज़ार घराने के शिष्य/सदस्यों का एक वृहद् समूह घराने की पाँचवीं पीढ़ी कहलाता है जो कि इस घराने के पुनर्जीवन का प्रमाण है। मई 26 व 27, 2012 को उ. अमानअली खाँ की 125 वीं जन्म तिथि पर मुम्बई के सायन में आयोजित हुये भेंडी बाज़ार घराना संगीत सम्मेलन में देशभर से इस घराने के प्रतिनिधि शिष्यों व कलाकारों में से डॉ. सुहासिनी कोरटकर, प्रा. द्वारकानाथ भोंसले, अनुराधा मराठे, मीनाक्षी मुखर्जी, शुभा जोशी, शरद करमरकर, केदार बोडस, नरेन्द्र कुमार ब्यावत, राजश्री महाजनी, किशोरी जानोरीकर, अनुराधा कुबेर, भूमिका द्विवेदी, शैलेश माविनकुर्वे, अपूर्वा रानाडे तथा प्रद्न्या लाटकर आदि ने अपनी आकर्षक प्रस्तुतियाँ दी। [17]

थिरकती, नृत्य करती, महकती इस समृद्ध गायकी के लिये संभवतया हर शास्त्रीय संगीत रसिक यही शुभकामना करेगा कि यह पुनर्जीवन इसे समृद्धि के शीर्ष तक पहुँचाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1,2,3 – लावण्य कीर्ति सिंह 'काव्या', संगीत संजीवनी, पृ. 107
4 – विजयलक्ष्मी जैन, संगीत दर्शन, पृ. 105
5 – लक्ष्मी नारायण गर्ग, निबन्ध संगीत, पृ. 143
6 – डॉ. शिप्रा पंत, रागशास्त्र में पारम्परिक बंदिशों की भूमिका, पृ. 108, 109
7 – वामनहरि देशपाण्डे, घरानेदार गायकी, पृ. 24, 25
8 – डॉ. इब्राहिम अली, भारतीय संगीतकार उ. अमीर खां
9 – 'माणूस' दिवाली अंक 1972, पृ. 37
10 – स्मारिका भेंडी बाज़ार घराना संगीत सम्मेलन – 2012, पृ. 57
11 – 'संगीत' भेंडी बाज़ार घराना अंक, 2006, पृ. 11
12 – 'स्मारिका' भेंडी बाज़ार घराना संगीत सम्मेलन 2012, पृ. 20, 21, 22, 23, 24
13 – 'स्मारिका' भेंडी बाज़ार घराना संगीत सम्मेलन, पृ. 19
14 – 'संगीत' भेंडी बाज़ार घराना अंक 2006, पृ. 12
15 – 'स्मारिका' भेंडी बाजार घराना संगीत सम्मेलन 2012, पृ. 40
16 – 'संगीत' भेंडी बाजार घराना अंक, 2006 पृ. 134
17- 'स्मारिका' भेंडी बाजार घराना संगीत सम्मेलन 2012, पृ.